Saarth
E-Journal of Research

ISSNNO:2395-339X

सतत विकास का सामाजिक परिवर्तन पर प्रभाव : एक अध्ययन

डॉ0 मधु प्रभा तिवारी
एसो0 प्रो0 अर्थशास्त्र
कालपी कॉलेज, (कालपी)

शोध सारांश

विभिन्न देशों में जब से नियोजित आर्थिक परिवर्तन की प्रक्रिया की शुरूआत की गई है तब से समाज में होने वाले इन सामाजिक परिवर्तनों के मूल्यांकन की भी आवश्यकता महसूस की गई कि इनका प्रभाव कितना और कैसा है? समूह के आकार में वृद्धि अर्थव्यवस्था में परिवर्तन, अस्थिर जीवन में स्थिर जीवन का प्रारंभ, सामाजिक संरचना में रूपांतरण, धार्मिक विश्वासों एवं क्रियाओं का महत्व विज्ञान का विकास, नवीन दर्शन आदि इन सामाजिक परिवर्तनों से संबंधित है। प्राचीन काल से वर्तमान समय तक समाज के लगभग हर एक पहलू में परिवर्तन हुआ। यह बात प्राचीन काल के आदिम और आधुनिक दोनों ही समाजों के लिए समान रूप से लागू होती है। दुनिया में पूँजीवादी औद्योगीकरण की संक्रमण प्रक्रिया से गुजर रहे देशों के विश्लेषण के लिए सामाजिक सिद्धान्तों का प्रयोग ही सामाजिक विकास है।

मुख्य शब्द – परिचय, परिभाषा, उद्देश्य, अवधारण।

सार

परिचय

विभिन्न देशों में जब से नियोजित आर्थिक परिवर्तन की प्रक्रिया की शुरूआत की गई है तब से समाज में होने वाले इन सामाजिक परिवर्तनों के मूल्यांकन की भी आवश्यकता महसूस की गई कि इनका प्रभाव कितना और कैसा है? समूह के आकार में वृद्धि अर्थव्यवस्था में परिवर्तन, अस्थिर जीवन में स्थिर जीवन का प्रारंभ, सामाजिक संरचना में रूपांतरण, धार्मिक विश्वासों एवं क्रियाओं का महत्व विज्ञान का विकास, नवीन दर्शन आदि इन सामाजिक परिवर्तनों से संबंधित है। प्राचीन काल से वर्तमान समय तक समाज के लगभग हर एक पहलू में परिवर्तन हुआ। यह बात प्राचीन काल के आदिम और आधुनिक दोनों ही समाजों के लिए समान रूप से लागू होती है। दुनिया में पूँजीवादी औद्योगीकरण की संक्रमण प्रक्रिया से गुजर रहे देशों के विश्लेषण के लिए सामाजिक सिद्धान्तों का प्रयोग ही सामाजिक विकास है।

विकास एक सामाजिक प्रक्रिया है जो ऐसे परिवर्तनों को लक्षित करती है जो प्रगति की ओर उन्मुख रहते हैं। सामाजिक विकास का संबंध आर्थिक पहलू से है लेकिन आर्थिक पहलू के साथ–साथ यह सामाजिक संस्थाओं तथा सांस्कृतिक तत्वों से भी संबंधित होता है। अगर हम सतत विकास की बात करे तो सतत विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जो न केवल प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण पर बल देती है, बल्कि उन संसाधनों की बर्बादी पर भी रोक लगाती है। साथ ही सतत विकास एक ऐसी आवश्यकता है जो मात्र कुछ लोगों के लिए नहीं बल्कि सम्पूर्ण लोगों के लिए है। मानव जीवन में अनेक आवश्यकताएँ होती है। इन आवश्यकताओं की पूर्ति उपलब्धसंसाधनों में सामान्यतः वनस्पति, पेड़, पौधे, जंगल, खनिज,

Saarth
E-Journal of Research
ISSNNO:2395-339X

खाद्यान्न इत्यादि कुछ भी हो सकते है। समाज के विकास के प्रारंभिक दौर में, जनसंख्या की अपेक्षा संसाधनों की अधिकता थी। किन्तु वर्तमान समय में स्थिति बिल्कुल विपरीत हो गयी है। जिसका कारण जनसंख्या का तेजी से बढ़ना है। जनसंख्या जिस अनुपात में बढ़ी उस अनुपात में संसाधनों में कोई वृद्धि नहीं हुई। इस संबंध में विकासशील देशों की स्थिति अत्यंत गंभीर है। भारत जैसे देश में जहाँ जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ रही है वहीं उस अनुपात में संसाधनों में वृद्धि नहीं हो रही है। इसके परिणाम स्वरूप लोगों को विभिन्न समस्याओं जैसे पानी की समस्या, प्रदूषण की समस्या ग्लोबल वार्मिंग, गरीबी, बेरोजगारी, वेश्यावृत्ति, भिक्षावृत्ति, भूखमरी इत्यादि का सामना करना पड़ रहा है। जल संकट से आज पूरा देश जूझ रहा है।

सतत विकास की परिभाषा

ब्रन्टलैंड प्रतिवेदन, के अनुसार "सतत विकास वह विकास है जो वर्तमान की आवश्यकताओं की पूर्ति आगे की पीढ़ियों की आवश्यकताओं की बलि दिये बिना पूरी करता हो।" विकास के विभिन्न अर्थ व परिभाषाओं का यही सार निकलता है कि वास्तव में विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जो निरन्तर चलती रहती है।

यह प्रक्रिया तभी सार्थक होती है जब इसमें मानव विकास, आर्थिक वृद्धि एवं पर्यावरण सुरक्षा के बीच एक उचित संतुलन हो। सतत विकास का अर्थ एक ऐसे विकास से है जो वर्तमान की आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ–साथ भविष्य की आवश्यकताओं का भी ध्यान रखे। विकास ऐसा हो जो केवल ढांचा खड़ा करने में ही विश्वास न रखता हो बल्कि अन्य पहलुओं जैसे मानव संसाधन के विकास, पर्यावरण सन्तुलन, संसाधनों का उचित रख–रखाव व संरक्षण, लाभों के समान वितरण हेतु उचित व्यवस्था आदि को भी ध्यान में रखता हो।

जो किसी विभाग/संस्था या व्यक्ति पर निर्भर न रह कर स्वावलम्बी हो तथा स्थानीय निवासियों द्वारा संचालित हो। सतत् विकास में जनसहभागिता की बड़ी अहम् भूमिका है।

सतत विकास के सिद्धांत

सतत विकास को गहराई से समझने के लिए उसके सिद्धान्तों को जानना आवश्यक है। सतत विकास के मुख्य सिद्धांत है।

1. स्थानीय समुदाय का सशक्तिकरण – सतत विकास प्रक्रिया का पहला सिद्धान्त है जन समुदाय का सशक्तिकरण। विकास के साथ पैदा होने वाले सबसे बड़े अवरोधों में स्थानीय समुदाय की संस्कृति, पारम्परिक अधिकारों, संसाधनों तक पहुंच एवं आत्म–सम्मान आदि की अवहेलना मुख्य है। इससे स्थानीय समुदाय का विकास कार्यक्रमों के प्रति जुड़ाव के स्थान पर अलगाव तथा रोष पैदा होता है। अतः विकास को चिरन्तर या सत्त बनाने के लिए स्थानीय निवासियों के अधिकारों को पहचानना तथा उनके मुद्दों को समर्थन प्रदान करना आवश्यक है।

साथ ही सतत विकास की प्रक्रिया समुदाय को जोड़ती है व उनके सशक्तिकरण को बढ़ावा देती है।

2. स्थानीय ज्ञान एवं अनुभवों को महत्व – स्थानीय समुदाय पारम्परिक ज्ञान, अनुभव व कौशल का धनी है। विकास के नाम पर नये विचार एवं ज्ञान थोपने के स्थान पर सतत विकास स्थानीय निवासियों

Saarth
E-Journal of Research
ISSNNO:2395-339X

के ज्ञान एवं अनुभवों को महत्व देता है तथा उपलब्ध ज्ञान एवं अनुभवों को आधार मानकर विकास कार्यक्रम तैयार किये जाते है।

3. स्थानीय समुदाय की आवश्यकताओं एवं प्राथमिकताओं की पहचान – सतत विकास का अगला सिद्धान्त है विकास प्रक्रिया का समुदाय की आवश्यकताओं व प्राथमिकताओं पर आधारित होना। जमीनी वास्तविकताओं को नजर अन्दाज कर ऊपर से थोपा गया विकास कभी भी समाज में सकारात्मक बदलाव नहीं ला सकता।

अतः आवश्यकताओं एवं प्राथमिकताओं की पहचान स्थानीय निवासियों के साथ मिल–बैठ कर उनके दृष्टिकोण एवं नजरिये को समझ कर करने से ही सतत विकास की ओर बढ़ा जा सकता है।

4. स्थानीय निवासियों की सहभागिता – कार्यक्रम नियोजन से लेकर क्रियान्वयन तथा प्रबन्धन में ग्रामवासियों की सहभागिता को सतत विकास की प्रक्रिया में आवश्यक माना गया है। सहभागिता का अर्थ भी स्पष्ट होना चाहिए तथा स्थानीय समुदाय द्वारा विभिन्न स्तरों पर लिये गये निर्णयों को स्वीकारना ही उनकी सच्ची सहभागिता प्राप्त करना है।

5. लैंगिक समानता – पिछले अनुभवों से यह स्पष्ट है कि विकास की जिन गतिविधियों को महिला एवं पुरुषों दोनों की आवश्यकताओं को ध्यान में रख कर तैयार नहीं किया जाता है तथा जिनमें महिलाओं की बराबर भागीदारी नहीं होती, वह न केवल अनुचित होती है बल्कि उनके सफल एवं चिरन्तर होने में संदेह रहता है।

चिरन्तर बनाने के लिए विकास को महिलाओं तथा पुरुषों की भूमिकाओं, प्राथमिकताओं तथा आवश्यकताओं को ध्यान में रख कर तैयार किया जाना पहली शर्त है।

6. कमजोर वर्गों को पूर्ण अधिकार – सतत विकास का सिद्धान्त है समाज के सभी वर्गों को विकास के नियोजन में शामिल करना व विकास का लाभ पहुँचाना। सदियों से विकास प्रक्रिया से अछूते व उपेक्षित रहे समाज के कमजोर वर्गो जैसे भूमिहीन, अनुसूचित जाति एवं जनजाति व महिलाओं को आधुनिक विकास प्रक्रिया में शामिल करने पर सतत विकास बल देता है। अतः चिरन्तरता के लिए समाज के कमजोर एवं उपेक्षित वर्ग के अधिकारों का समर्थन किया जाना आवश्यक है तथा उन्हें विकास की मुख्य धारा से जोड़ा जाना आवश्यक है।

7. जैविक विविधता तथा प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण – आर्थिक वृद्धि, पर्यावरण संरक्षण व सामाजिक जुड़ाव सतत विकास के मजबूत सतम्भ हैं। विकास की जिस प्रक्रिया में इन तीनों को साथ लेकर नियोजन किया जाता है वही सतत विकास कहलाता है। पर्यावरण को खतरे में डालकर व सामाजिक मूल्यों की परवाह किये बिना अगर आर्थिक विकास की प्रक्रिया को बल दिया जाता है तो वह सतत विकास नहीं है।

पारिस्थितिकीय तन्त्र के विभिन्न घटकों का सन्तुलन खराब हो जाने से बहुत सी पर्यावरणीय समस्याएं पैदा होने लगी हैं। अतः विकास को चिरन्तर बनाने के लिए आर्थिक विकास के साथ–साथ जैविक विविधता तथा प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण आवश्यक है।

8. स्थानीय तकनीकों, निवेश तथा बाजार को बढ़ावा – बाहरी सहयोग पर आधारित विकास कार्यों की लम्बे समय तक चलने की कोई गारन्टी नहीं होती है। साथ ही साथ बाहरी तकनीक की समाज में

Saarth
E-Journal of Research
ISSNNO:2395-339X

स्वीकार्यता पर भी शंकाएं होती है। अतः विकास की चिरन्तरता हेतु स्थानीय तकनीकों को सुधार कर उनके उपयोग को बढ़ावा देना, स्थानीय स्तर पर संसाधनों को जुटाना तथा स्थानीय बाजार व्यवस्था को मजबूत बनाना आवश्यक है।

सतत विकास का लक्ष्य एवं उद्देश्य

सतत विकास को ध्यान में रखकर इसके लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत स्पष्ट किया जा सकता है –

1. पहले से हुए पर्यावरण व जैविक नुकसान की भरपाई करना।

2. भविष्य में देश में विकास के कारण होने वाले नुकसान से रक्षा करना।

3. संसाधनों का सफल प्रबंधन करना ताकि मानव की परिवर्तनशील आवश्यकताओं को संतुष्ट किया जा सके।

4. प्रदूषण एवं पर्यावरण क्षरण पर नियंत्रण करना।

5. सामाजिक समानता और सामाजिक न्याय के प्रति वचनबद्धता ।

6. जैविक सह अस्तित्व की रचना करना ।

7. विकास के अवसरों में केवल कुछ ही लोगों को भागीदार न बनाकर सभी लोगों को अवसर प्रदान करना।

सतत विकास की अवधारणा

मानव–पर्यावरण संबंध एक सहजीवी होना चाहिए जो पृथ्वी के प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, संरक्षण और बेहतर प्रबंधन की मांग करता है। यह इस बात पर जोर देता है कि संसाधनों के दोहन के साथ–साथ महत्वपूर्ण संसाधनों की बहाली जारी रहनी चाहिए। पर्यावरण की बहाली के प्रति दृष्टिकोण में बदलाव हमारे समाज के सतत विकास और विकास के लिए महत्वपूर्ण है।

पारिस्थितिक तंत्र को अपने चरमोत्कर्ष तक पहुँचने के लिए लंबे समय की आवश्यकता होती है। पारिस्थितिकी तंत्र की चार विशेषताएं हैं– जटिलता, स्थिरता, विविधता और लचीलापन। एक पारिस्थितिकी तंत्र की अखंडता को बनाए रखा जा सकता है, बशर्ते हमें इसकी वहन क्षमता, इसकी आत्मसात करने की क्षमता और इसकी नवीकरणीयता के बारे में पर्याप्त जानकारी हो। इसकी एकीकृत प्रकृति के कारण, किसी एक घटक को होने वाली क्षति पूरे पारिस्थितिकी तंत्र को खतरे में डाल सकती है।

प्राकृतिक और साथ ही संशोधित पारिस्थितिक तंत्र को बहाल करने के लिए पर्याप्त संरक्षण उपाय करके जैव विविधता का संरक्षण करना आवश्यक है।

पर्यावरणीय स्थिरता के अध्ययन में जनसंख्या एक महत्वपूर्ण पहलू है, क्योंकि मानव जीवन की गुणवत्ता पर्यावरण की गुणवत्ता से अविभाज्य है। मानव–भूमि अनुपात भूमि की वहन क्षमता के साथ–साथ पारिस्थितिकी तंत्र की आत्मसात करने की क्षमता को इंगित करता है। यह अनुपात स्थिर होना चाहिए।

Saarth
E-Journal of Research
ISSNNO:2395-339X

पर्यावरण और सतत विकास की संकल्पना

सतत विकास के लिए परिभाषाओं और व्याख्याओं की एक विस्तृत श्रृंखला उपलब्ध है, लेकिन सबसे अधिक बार उद्धृत परिभाषा हैः "सतत विकास भविष्य की पीढ़ियों की अपनी जरूरतों को पूरा करने की क्षमता से समझौता किए बिना वर्तमान की जरूरतों और आकांक्षाओं को पूरा करना चाहता है।"

यह शब्द पहली बार 1980 में अंतर्राष्ट्रीय संरक्षण और विकास संघ के तत्वावधान में आयोजित विश्व संरक्षण रणनीति में उपयोग में आया था। इस शब्द को पर्यावरण और विकास पर विश्व आयोग, अवर कॉमन फ्यूचर (1987) द्वारा अध्ययन द्वारा लोकप्रिय बनाया गया था, जिसे ब्रुंटलैंड रिपोर्ट भी कहा जाता है। स्थिरता का विचार उपयोगितावादी संसाधन प्रबंधन में निहित है, यानी निरंतर उपज की तकनीकी धारणा। यह अक्षय संसाधनों के दोहन को संदर्भित करता है जिसे उसी संसाधन के भविष्य के प्रवाह को खतरे में डाले बिना बनाए रखा जा सकता है।

हालाँकि, स्थिरता की प्रचलित अवधारणा को तकनीकी उन्नयन द्वारा लाए गए संसाधनों की मात्रा में परिवर्तन की स्थिति में लगातार परिवर्तन की आवश्यकता होती है। आलोचकों का तर्क है कि विकास और वितरण से संबंधित कठिन मुद्दों को हल करने के लिए सतत विकास एक सुविधाजनक सूत्र बन गया है। इस प्रकार स्थिरता की अवधारणा के संबंध में बहुत भ्रम हो गया है।

धारणीयता की धारणा पारिस्थितिक संरक्षण के मुद्दों को आजीविका के मुद्दों के साथ एकीकृत करती है, विशेष रूप से दुनिया के विकासशील देशों में। वास्तव में, सतत विकास और विकास की परिभाषा विकसित और विकासशील देशों के बीच एक महान विभाजन की विशेषता है।

विकसित दुनिया की प्राथमिक चिंता विकास के आर्थिक और तकनीकी पहलू हैं। इसके विपरीत, विकासशील देश अपनी सबसे बड़ी समस्याओं का सामना गरीबी और गरीबों की बुनियादी जरूरतों को पूरा करने में करते हैं। फिर भी, विकसित और विकासशील दोनों देशों का विकास, शहरीकरण और औद्योगीकरण से संबंधित उभरती समस्याओं के समाधान में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की भूमिका में एक समान विश्वास है।

निष्कर्ष

एक सफल सतत विकास एजेंडा के लिए सरकारों ,निजी क्षेत्र और प्रबुद्ध समाज के बीच भागीदारी आवश्यक है। ये 17 महत्वाकांक्षी लक्ष्य और उनके लक्ष्य पर जटिल चुनौतियाँ न तो प्रदेशों के भीतर और न ही राष्ट्रीय सीमाओं के भीतर सीमित हैं। जलवायु परिवर्तन एक वैश्विक चुनौती है और व्यवसाय इसे पूरा करने के लिए सरकारों के जितना योगदान कर सकते हैं। विश्वविद्यालयों और वैज्ञानिकों के बिना, नए आविष्कार और नए विचार पनप नहीं सकते हैं और महाद्वीपों के बीच ज्ञान के आदान – प्रदान के बिना, यह बिल्कुल भी नहीं हो सकता है। लैंगिक समानता के लिए जितना कानूनी प्रावधान आवश्यक है, उतना ही महत्वपूर्ण सामुदायिक समर्थन भी है। यदि हमारे महामारी वैश्विक हैं ,तो उनके समाधान भी वैश्विक हैं। समावेशी भागीदारी साझा सोच और सामान्य लक्ष्यों की नींव पर खड़ी होती है ,जो लोगों और पृथ्वी को केंद्र में रखती है और वैश्विक ,क्षेत्रीय ,राष्ट्रीय और स्थानीय स्तरों पर इसकी आवश्यकता होती है।

Saarth
E-Journal of Research

ISSNNO:2395-339X

संदर्भ सूची

1. पर्यावरण और पारिस्थितिक अध्ययन ,बी . बी . पी सिंह ,वसुंधरा प्रकाशन ,गोरखपुर
2. बाली क्लाइमेट डील ,हिंदुस्तान टाइम्स , 16 दिसंबर 2007
3. आशीष कोठारी ,प्श्रच् । ,जुलाई–सितंबर 1989
4. गौरीशंकर राजहंस ,हम अपने पर्यावरण की रक्षा करें ,नवभारत टाइम्स , 25 जुलाई 1992
5. राजनीतिक घोषणा और कार्यान्वयन की योजना ,सतत विकास पर जोहान्सबर्ग घोषणा ,संयुक्त राष्ट्र , 2003
6. हमारा सामान्य भविष्य ,पर्यावरण और विकास पर विश्व आयोग ,ऑक्सफॉड प्रेस ,दिल्ली , 1987
7. सतत विकास पर विशेष अंक , प्श्रच।, प्प्च।,जुलाई–सितंबर 1993
8. डी . सी . बैरी और एस . बास ,सतत विकास का मंचनः ए रिसोर्सबुक ,अर्थस्कैन प्रकाशन ,लंदन 2002
9. एच . ई . डेल ,बियॉन्ड ग्रोथः द इकोनॉमिक्स ऑफ सस्टेनेबल डेवलपमेंट ,बीकन ,बोस्टन , 1996
10. पर्यावरण भूगोल ,सविंद्र सिंह ,वसुंधरा प्रकाशन ,गोरखपुर